रूसी कहानी

आंतोन चेखव

भिखारी

भिखारी (रूसी कहानी) : आंतोन चेखव

भिखारी (रूसी कहानी) : आंतोन चेखव

Bhikhari (Russian Story) : Anton Chekhov

‘ओ साहिब जी, एक भूखे बेचारे पर दया कीजिए। तीन दिन का भूखा हूं। रात बिताने के लिए जेब में एक पैसा भी नहीं। पूरे आठ साल तक गांव के एक स्कूल में मास्टर रहा। बड़े लोगों की बदमाशी से नौकरी चली गई। जुल्म का शिकार बना हूं। अभी साल पूरा हुआ है बेरोजगार भटकते फिरते हुए।’

बैरिस्टर स्क्वार्त्सोफ़ ने भिखारी के मैले-कुचैले कोट, नशे से गंदली आंखें, गालों पर लगे हुए लाल धब्बे देखे। उन्हें लगा कि इस आदमी को कहीं पहले देखा है।

‘अभी मुझे कलूगा जिले में नौकरी मिलने ही वाली है’, भिखारी आगे बोलता गया, ‘पर उधर जाने के लिए पैसे नहीं हैं। कृपा करके मदद कीजिए साहिब। भीख मांगना शर्म का काम है, पर क्या करूं, मजबूर हूं।’ स्क्वार्त्सोफ़ ने उसके रबर के जूतों पर

नजर डाली जिन में से एक नाप में छोटा और एक बड़ा था तो उन्हें एकदम याद आया, ‘सुनिए, तीन दिन पहले मैं ने आपको सदोवाया सड़क पर देखा था’, बैरिस्टर बोले, ‘आप ही थे न ? पर उस वक़्त आपने मुझे बताया था आप स्कूल मास्टर नहीं, बल्कि छात्र हैं जिसे कॉलेज से निकाल दिया गया है। याद आया?’

‘न...नहीं... यह नहीं हो सकता’, भिखारी घबराकर बुदबुदाया। ‘मैं गांव में मास्टर ही था। चाहें तो कागज़ात दिखा दूं।’

‘झूठ मत बोलो। तुमने मुझे बताया था कि तुम एक छात्र हो, कॉलेज छूटने की कहानी भी सुनाई थी मुझे। याद आया?’

स्क्वात्सोंफ साहब का चेहरा गुस्से से तमतमा उठा। घृणा से मुंह बिचकाकर वह भिखारी से दो कदम पीछे हट गए। फिर क्रोध भरे स्वर में चिल्लाए, ‘कितने नीच हो तुम। बदमाश कहीं के। मैं तुम्हें पुलिस के हवाले कर दूंगा। भूखे हो, ग़रीब हो, यह ठीक है, पर इस बेशर्मी से झूठ क्यों बोलते हो?’

भिखारी ने दरवाजे के हत्थे पर अपना हाथ रखकर पकड़े गए चोर की तरह नजर दौडाई।

‘मैं...मैं झूठ नहीं बोलता।’ वह बुदबुदाया, ‘मैं कागजात...’

‘अरे कौन विश्वास करेगा,’ स्क्वात्सोंफ साहिब का क्रोध बढ़ता गया। गांव के मास्टरों और गरीब विद्यार्थियों पर समाज जो सहानुभूति दिखाता आया है, उस से लाभ उठाना कितना

गंदा, नीच और घिनौना काम है।

स्क्वात्सोंफ़ साहब क्रोध से आग बबूला हो उठे और भिखारी को बुरी तरह कोसने लगे। अपनी इस निर्लज्ज धोखेबाजी से उस आवारा आदमी ने उनके मन में घृणा पैदा कर दी थी और उन भावनाओं का अपमान किया था जो स्क्वात्सोंफ साहब को अपने चरित्र में सब से मूल्यवान लगती थीं। उनकी
उदारता, भावुकता, गरीबों पर दया, वह भीख जो वह खुले दिल से मांगनेवालों को दिया करते थे, सब कुछ अपवित्र करके मिट्टी में मिला दिया इस बदमाश ने। भिखारी भगवान् का नाम लेकर अपनी सफाई देता रहा, फिर चुप हो गया और उसने शर्म से सर झुका लिया। फिर दिल पर हाथ रखकर बोला, 'साहिब, मैं सचमुच झूठ बोल रहा था। न मैं छात्र हूं न मास्टर। मैं एक संगीत मंडली में था। फिर शराब पीने लगा और अपनी नौकरी खो बैठा। अब क्या करूं? भगवान ही मेरा साक्षी है, बिना झूठ बोले काम नहीं चलता। जब सच बोलता हूं तो कोई भीख भी नहीं देता। सच को लेकर भूखों मरना होगा या सर्दी में बेघर जम जाना होगा, बस। कहते तो आप सही हैं, यह में भी समझता हूं, पर क्या करूं?'

'करना क्या है? तुम पूछ रहे हो कि करना क्या है।'
स्क्वात्सोंफ साहब उसके निकट आकर बोले, 'काम करना चाहिए। काम करना चाहिए और क्या।'

'काम करना चाहिए, यह तो मैं भी समझता हूं। नौकरी कहां

मिलेगी?'

'क्या बकवास है। जवान हो, ताकतवर हो, चाहो तो नौकरी क्यों नहीं मिलेगी? पर तुम तो सुस्त हो, निकम्मे हो, शराबी हो! तुम्हारे मुंह से वोदका की बदबू आ रही है जैसे किसी शराब की दूकान से आती है। झूठ, शराब और आरामतलबी तुम्हारे खून की बूंद-बूंद पहुंच चुके हैं। भीख मांगने और झूठ बोलने के अलावा तुम और कुछ जानते ही नहीं। कभी नौकरी कर लेने का कष्ट उठा भी लेंगे जनाब तो बस किसी दफ्तर में या संगीत मंडली में या किसी और जगह जहां मक्खी मारते-मारते पैसे कमा लें। मेहनत-मजदूरी क्यों नहीं करते? भंगी या कुली क्यों नहीं बन जाते? ख़ुद को बहुत ऊंचा समझते हो।'
'कैसी बात कर रहे हैं आप?' भिखारी बोला। मुंह पर एक तिक्त मुस्कान उभरी। मेहनत-मजदूरी कहां से मिलेगी? किसी दुकान में नौकरी नहीं कर सकता, क्योंकि व्यापार बचपन से ही सीखा जाता है। भंगी भी कैसे बनूं, कुलीन घर का हूं। फ़ैक्टरी में भी काम करने के लिए कोई पेशा तो आना चाहिए, मैं तो कुछ नहीं जानता।'

'बकवास कर रहे हो! कोई न कोई कारण ढूंढ़ ही लोगे। क्यों जनाब, लकडी फाड़ोगे?'

'मैंने कब इनकार किया है। पर आज लकड़ी फाड़ने वाले मज़दूर भी तो बेकार बैठे हैं।'

'सभी निकम्मे लोगों का यही गाना है। मैं मजदूरी दिलवाता तो

मुंह फेरकर भागोगे। क्या मेरे घर में लकड़ी फाड़ोगे?'

'आप चाहें तो क्यों नहीं करूंगा।'

'वाह रे। देखें तो सही!'

स्क्वात्सोंफ़ साहब ने जल्दी से अपनी रसोई से अपनी बावरचिन को बुलाया और नाराजगी से बोले, 'ओल्गा, इन साहब को जलाऊ लकडी की कोठरी में ले जाओ। इनको लकडी फाड़ने के लिए दे दो।'

भिखारी अनमना-सा कंधे हिलाकर बावरचिन के पीछे-पीछे चल पड़ा। उसके चाल-चलन से यह साफ दिखाई दे रहा था कि वह भूख और बेकारी के कारण नहीं, बस अपने स्वाभिमान की वजह से ही यह काम करने के लिए मान गया है। यह भी लग रहा था कि शराब पीते-पीते वह कमजोर और अस्वस्थ हो चुका है। काम करने की कोई भी इच्छा नहीं है उस की।

स्क्वात्सोंफ साहब अपने डाइनिंग-रूम पहुंचे जहां से आंगन और कोठरी आसानी से दिखाई दे रहे थे। खिड़की के पास खड़े होकर उन्होंने देखा कि बावरचिन भिखारी को पीछे के दरवाजे से आंगन में ले आई है। गंदी-मैली बर्फ को रौंदते हुए वे दोनों कोठरी की ओर बढ़े। भिखारी को क्रोध भरी आंखों से देखती ओल्गा ने कोठरी के कपाट खोल दिए और फिर धड़ाम से दीवार से भिड़ा दिए।

'लगता है हमने ओल्गा को कॉफी नहीं पीने दी,' स्क्वात्सोंफ

साहब ने सोचा। ‘कितनी जहरीली औरत है।’ फिर उन्होंने देखा कि झूठा मास्टर लकड़ी के एक मोटे कुंदे पर बैठ गया और अपने लाल गालों को अपनी मुट्ठियों में दबोचकर किसी सोच-विचार में डूब गया। ओल्गा ने उसके पैरों के पास कुल्हाड़ी फेंककर नफरत से थूक दिया और गालियां बकने लगी। भिखारी ने डरते-डरते लकड़ी का एक कुंदा अपनी ओर खींचा और उसे अपने पैरों के बीच रखकर कुल्हाड़ी का एक कमजोर-सा वार किया। कुंदा गिर गया। भिखारी ने उसे दुबारा थामकर और सर्दी से जमे हुए अपने हाथों पर फूंक मारकर कुल्हाड़ी इस तरह चलाई जैसे वह डर रहा हो कि कहीं अपने घुटने या पैरों की ऊंगलियों पर ही प्रहार न हो जाए। लकड़ी का कुंदा फिर गिर गया।

स्क्वार्त्सोफ साहब का क्रोध टल चुका था। उन्हें खुद पर कुछ-कुछ शर्म आने लगी कि इस निकम्मे, शराबी और शायद बीमार आदमी से सर्दी में भारी मेहनत-मजदूरी किसलिए करवाई।

‘चलो, कोई बात नहीं’, अपने लिखने-पढ़ने के कमरे में जाते समय उन्होंने सोचा, उसकी भलाई ही होगी। एक घंटे बाद ओल्गा ने अपने मालिक को सूचित किया कि काम पूरा हो गया है।

‘लो, उसे पचास कोपेक दे दो’, स्क्वार्त्सोफ साहब ने कहा, ‘चाहो तो हर पहली तारीख को लकड़ी फाड़ने आ जाया करो। काम मिल जाएगा।’

अगले महीने की पहली तारीख को भिखारी फिर आ गया। शराब के नशे में लड़खड़ाने पर भी उसने पचास कोपेक कमा ही लिए। उस दिन से वह जब-तब आया ही करता था। हर बार कोई न कोई काम कर ही लेता। कभी आंगन से बर्फ हटाता था, कभी कोठरी साफ करता था, कभी कालीनों और मेट्रेसों से धूल निकालता था। हर बार वह बीस-चालीस कोपेक कमाता था और एक बार स्क्वात्सोंफ साहब ने उसे अपने पुराने पतलून भी भिजवाए थे।

नए फ्लैट में जाते समय स्क्वात्सोंफ साहब ने उसे फर्नीचर बांधने और उठाकर ले जाने में कुलियों की मदद करने को कहा। उस दिन भिखारी संजीदा, उदास और चुप्पा था। फर्नीचर पर हाथ बहुत कम रखता था, सर झुकाए इधर-उधर मंडरा रहा था। काम करने का बहाना भी नहीं कर रहा था, बस सर्दी से सिकुड़ता रहा था और जब दूसरे कुली उसकी सुस्ती, कमजोरी और फटे-पुराने, 'साहब किस्म के' ओवरकोट का मजाक उड़ाते थे तो शरमाता रहा था। काम पूरा हुआ तो स्क्वात्सोंफ साहब ने उसे अपने पास बुला भेजा।

'लगता है, तुम पर मेरी बातों का कुछ असर पड़ा है', भिखारी के हाथ में एक रूबल पकडाते हुए उन्होंने कहा, 'यह लो अपनी कमाई। देखता हूं तुमने पीना छोड़ दिया है और मेहनत के लिए तैयार हो। हां, नाम क्या है तुम्हारा?'

'जी, लुश्कोफ।'

'तो, लुश्कोफ अब मैं तुम्हें कोई दूसरा और साफ-सुथरा काम दिलवा सकता हूं। पढ़ना-लिखना जानते हो?'

'जी हां।'

'तो यह चिट्ठी लेकर कल मेरे एक दोस्त के यहां चले जाना। कागजातों की नक़ल करने की नौकरी है। सच्चे मन से काम करना, शराब मत पीना, मेरा कहना मत भूलना। जाओ।'

एक पापी को सही रास्ता दिखाकर स्क्वार्त्सोफ साहब बहुत प्रसन्न थे। उन्होंने लुश्कोफ के कंधे पर एक प्यार की थपकी दी और उसे छोड़ने बाहर दरवाज़े तक आए फिर उससे हाथ भी मिलाया। लुश्कोफ वह चिट्ठी लेकर चला गया और उस दिन के बाद फिर कभी नहीं आया।

***

दो साल बीत गए। एक दिन थिएटर की टिकट-खिड़की के पास स्क्वार्त्सोफ साहब को छोटे कद का एक आदमी दिखाई दिया। वह भेड़ के चमड़े की गरदनी वाला ओवरकोट और एक पुरानी-सी पोस्तीन की टोपी पहने हुए था। उसने डरते-डरते सब से सस्ता टिकट मांगा और पांच-पांच कोपेक के सिक्के दे दिए।

'अरे, लुश्कोफ़, तुम।' स्क्वार्त्सोफ ने अपने उस मजदूर को पहचान लिया, 'कैसे हो? क्या करते हो? जिंदगी ठीक-ठाक है न?'

'जी हां, ठीक-ठाक है, साहिब जी। अब मैं उसी नोटरी के यहां काम करता हूं, पैंतीस रूबल कमाता हूं।'

'कृपा है भगवान की। वाह, भाई, वाह। बड़ी खुशी की बात है! बहुत प्रसन्न हूं। सच पूछो तो तुम मेरे शिष्य जैसे हो न। मैंने तुम्हे एक सच्चा रास्ता दिखाया था। याद है, कितना कोसा था तुमको? कान गर्म हुए होंगे मेरी बातें सुनकर। धन्य हो, भाई, कि मेरे वचनों को तुम भूले नहीं।'

'धन्य हैं आप भी,' लुश्कोफ बोला, 'आपके पास न आता तो अब तक खुद को मास्टर या छात्र बतलाकर धोखेबाजी करता फिरता। आपने मुझे खाई से निकालकर डूबने से बचाया है।'

'बहुत, बहुत खुशी की बात है।'

'आपने बहुत अच्छा कहा भी और किया भी। मैं आपका आभारी हूं और आपकी बावरचिन का भी, भगवान उस दयालु उदार औरत की भलाई करे। आपने उस समय बहुत सही और अच्छी बातें की थी, मैं उम्र भर आपका आभारी रहूंगा। पर सच पूछिए तो आपकी बावरचिन ओल्गा ही ने मुझे बचाया है।'

'वह कैसे?'

'बात ऐसी है साहिब जी। जब-जब मैं लकड़ी फाड़ने आया करता था वह मुझे कोसती रहती, 'अरे शराबी। तुझ पर जरूर कोई शाप लग गया है। मर क्यों नहीं जाता।' फिर मेरे सामने उदास बैठ जाती और मेरा मुंह देखते-देखते रो पड़ती, 'हाय

बेचारा’ इस लोक में कोई भी ख़ुशी नहीं देख पाया और परलोक में भी नरक की आग में ही जाएगा। हाय बेचारा, दुखियारा।’ वह बस इसी ढंग की बातें किया करती थी। उसने अपना कितना खून जलाया मेरे कारण, कितने आंसू बहाए, मैं आपको बता नहीं सकता। पर सब से बड़ी बात यह हुई कि वह ही मेरा सारा काम पूरा करती रहती थी। सच कहता हूं साहिब, आपके यहां मैंने एक भी लकड़ी नहीं फाड़ी, सब कुछ वही करती थी। उसने मुझे कैसे बचाया, उसको देखकर मैंने पीना क्यों छोड़ दिया, क्यों बदल गया मैं, आपको कैसे समझाऊं। इतना ही जानता हूं कि उसके वचनों और उदारता की वजह से मैं सुधर गया और मैं यह कभी नहीं भूलूंगा। हां साहिब जी, अब जाना है, नाटक शुरू होने की घंटी बज रही है।

लुश्कोफ सर झुकाकर अपनी सीट की ओर बढ़ गया।

(मूल रूसी से अनुवाद : अनिल जनविजय)